स्वास्थ्य समाचार पत्रिका

(मासिक)

न त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं नाऽपुनर्भवम्।
कामये दुःखतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्।।

ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

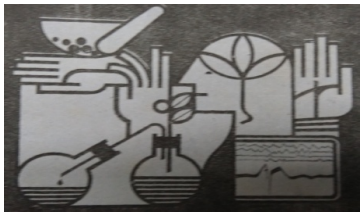

स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकार प्रशमनं च।।

प्रकाशक
आयुर्वेद संकाय,
चिकित्सा विज्ञान संस्थान,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, पिन – 221005

अंक–5 नवम्बर–2017

संरक्षक

प्रो0 विजय कुमार शुक्ल
निदेशक,
चिकित्सा विज्ञान संस्थान

प्रधान सम्पादक

प्रो0 यामिनी भूषण त्रिपाठी
संकाय प्रमुख,
आयुर्वेद संकाय

सम्पादक

प्रो0 हरि हृदय अवस्थी

सह–सम्पादक मण्डल

डॉ0 अभिनव
डॉ0 अनुराग पाण्डेय
डॉ0 कंचन चौधरी
डॉ0 संजीव कुमार
डॉ0 वैभव जायसवाल

सम्पादक सचिव

डॉ0 रामजीत विश्वकर्मा
श्रीमती चन्दा श्रीवास्तव

सम्पादकीय

प्रिय पाठकों,

सादर नमस्कार

प्रिय पाठकों, मधुमेह विकृत चयापचय जन्य व्याधि है जो तेजी से फैल रही है इसके अधिक समय तक रहने एवं बढ़ने से मधुमेह जनित तंत्रिका क्षति (डायबेटिक न्यूरोपैथी) सम्बन्धित व्याधियां उत्पन्न होती हैं इसी में आगे उच्च रक्तचाप, वृक्क (किडनी) सम्बन्धित रोग, रेटिनोपैथी जन्य अन्धता एवं हृदय विकार उत्पन्न हो जाते हैं इन्हीं को ध्यान में रखकर यह अंक–5 मधुमेह जनित तंत्रिका क्षति (डायबेटिक न्यूरोपैथी) एवं सम्बन्धित रोगों एवं उससे बचने के उपायों पर प्रस्तुत है। मधुमेह में जितना औषध आवश्यक है उतनी ही जीवन शैली में सुधार भी आवश्यक है यथा व्यायाम/योग/टहलना (कम से कम आधा घण्टा), अगर ब्लड ग्लूकोज का स्तर 100 एम जी प्रति डी एल से कम हो तो व्यायाम न करें, 1600 से 2000 कैलोरी के मध्य का आहार लें अर्थात् कम कैलोरी का संतुलित आहार जिसमें कार्बोहाइड्रेट एवं फैट की मात्रा कम हो तथा फाइबर की मात्रा अधिक हो, तनाव से मुक्त रहें, 6 से 8 घण्टे प्रतिदिन नियमित सोयें, शराब–सिग्रेट–तम्बाकू आदि नशीले पदार्थों का सेवन न करें, अधिक वजन वाले व्यक्ति 8 से 10 प्रतिशत अपना वजन कम करें, चीनी युक्त चाय–काफी, मिठाई एवं अन्य मीठे आहार का सेवन न करें। जिससे मधुमेह को नियंत्रित रखा जा सके। नियमित रूप से ब्लड शुगर की जांच– रात्री भोजन से 8 से 10 घण्टे के बाद प्रातः खाली पेट फास्टिंग और 75 ग्राम ग्लूकोज अथवा भोजन करने के 2 घण्टे बाद पी पी एवं एच बी ए 1 सी की जांच से मधुमेह के स्तर का आंकलन करें और विशेषज्ञ चिकित्सक से समय–समय पर नियमित परामर्श लें। लेखकों ने दुरूह विषयों को सरल ग्राह्य भाषा में प्रस्तुत किया है। मैं उनका आभारी हूँ। आशा और विश्वास है कि पाठक लाभान्वित होंगें।

जय आयुर्वेद, जय हिन्द!

प्रो0 हरि हृदय अवस्थी

वृक्क/गुर्दा (किडनी) क्रिया एवं रोग

प्रो0 यामिनी भूषण त्रिपाठी, संकाय प्रमुख आयुर्वेद

शरीर में वृक्क/गुर्दा (किडनी) एवं लीवर का महत्व चयापचय क्रियाओं के सन्तुलन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। शरीर में दो किडनी होती है जो रक्त को शुद्ध करने हेतु लगातार कार्य करती रहती है। विभिन्न कोशिकाओं में बनने वाले सार और मल से मल भाग रक्त के माध्यम से किडनी द्वारा छनकर बाहर निकलता है। मुख्य रूप से प्रोटीन के चयापचय से बनने वाले यूरिया एवं क्रियेटनीन को बाहर निकालता है। यदि किडनी कार्य करना बन्द कर दे तो इन द्रव्यों की मात्रा रक्त में बढ़ जाती है जिससे सम्पूर्ण चयापचय की प्रक्रिया बाधित होती है। किडनी की कार्यक्षमता को भी रक्त में इन्हीं द्रव्यों की मात्रा से पता किया जाता है। इसको रिनल फंक्शन टेस्ट के नाम से जानते हैं। किडनी धीरे–धीरे खराब होती है तथा बहुत देर में जब 70 प्रतिशत किडनी खराब हो जाती है तब इसका दुष्प्रभाव सामने आता है। साधारण भाषा में कहे तो यह छिपा हुआ रोग है। अतः इसकी रक्षा हेतु हमेशा प्रयास करते रहना चाहिये। किडनी रोग को एक्यूट एवं क्रानिक दो प्रकार में विभक्त किया गया है। पहला रोग दवाईयों के दुष्प्रभाव से या विषाक्त भोजन से या शरीर की मांस पेशियों के कारण से होता है जो कारण को हटने पर रोग ठीक हो जाता है। परन्तु दूसरे प्रकार का रोग जीवन शैली से उत्पन्न रोगों के दुष्प्रभाव के कारण होता हैं जो ठीक नहीं होते। अतः जीवन पर्यन्त जीवन शैली को सात्विक बनाये रखना ही श्रेयस्कर है। चिकित्सक वर्ग इसको 5 स्टेज में बांट कर देखते हैं। स्टेज 1 से स्टेज 3 तक पेशाब में प्रोटीन आता है। यदि आता भी है तो बहुत कम मात्रा में। इसको माइक्रो एल्बयुमिनूरिया कहते है। इसके उपर स्टेज 4 में अधिक मात्रा में प्रोटीन आने लगता है। इस समय तक दवा के माध्यम से इस रोग के बढ़ाव को रोकने का प्रयास किया जाता है। परन्तु स्टेज 5 आने पर यह असाध्य रोग हो जाता है। इस अवस्था में डायलेसिस करवाना या किडनी बदलना ही एकमात्र उपाय रह जाता है। इसको ईएसआरडि (इन्ड स्टेज रीनल डिसआर्डर) कहते हैं।

किडनी खराब होने के कई कारण है जिनमें जीवन शैली एवं खानपान से जुड़े कारण की चर्चा यहां पर करेंगे। मुख्य रूप से मधुमेह एवं उच्च रक्तचाप के कारण किडनी ज्यादा खराब होती है जैसा कि विदित है कि यह दोनों रोग बहुतायत में लोगों को उत्पन्न हो रहे हैं। यदि इन रोगों की रोकथाम एवं चिकित्सा ठीक से न की जाय तो किडनी खराब होने की आशा कई गुना बढ़ जाती है। यह ध्यान देने योग्य है कि एक बार जो कोशिका खराब हो जाती है वह फिर से ठीक नहीं होती है तथा बची हुई कोशिकाओं को खराब होने से बचाना ही एक विकल्प बचता है। अतः रोग को न बढ़ने देना ही इस रोग की चिकित्सा है। अतः आजकल आधुनिक चिकित्सा पद्धति में मधुमेह एवं उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करने वाली दवाई ही किडनी के उपचार हेतु इस्तेमाल की जाती है। जैसे ए.सी.ई इन्हिबिटर इत्यादि। परन्तु आयुर्वेद में कुछ ऐसी दवाईयां उपलब्ध हैं जो किडनी की कोशिकाओं के क्षरण होने को बचाती है। वे सीधे किडनी पर कार्य करती है। जैसे बिदारीकन्द, वरूसा, शिग्रु, पुनन्ती, गोक्षुर इत्यादि। इन औषधियों पर शोध कार्य तेजी से चल रहा है तथा भविष्य में नयी औषधियों को बाजार में आने की सम्भावना बनी है। अतः रोग की उत्पत्ति के बारे में चर्चा करें तो किडनी, नेफ्रान नामक कोशिकाओं से बनी होती है जो रक्त छानने का कार्य करती है। इसको समुचित रूप से ग्लोमेरूलस कहते है। यहां पर कई प्रकर की कोशकायें होती हैं जिनमें एव कोशिका का काम पोडोसाइट होता है। जब तक ये कोशिकायें स्वस्थ रहती है। रक्त से प्रोटीन को पेशाब में नहीं आने देती है। परन्तु जब पोडोसाइट कमजोर होने लगती है या मरने लगती है तब वे अपना काम करना बन्द कर देती है तथा प्रोटीन रक्त से छन कर पेशाब द्वारा बाहर आने लगता है। इस कोशिका में पोटोलिन एवं नेफरिन नामक प्रोटीन बनना कम हो जाता है तब उपरोक्त स्थिति उत्पन्न होती है। इन कोशिकाओं के मरने का मुख्य कारण किडनी में सूजन उत्पन्न होना है। वस्तुतः किडनी कोशिकाओं में रक्त के प्रवाह के कम होने से वहां पर आक्सीजन की कमी होने लगती है जिससे उपरोक्त सूजन होता है तथा कोशिकायें मरती हैं। अतः रक्त के सम्पूर्ण संचार को बनाये रखना तथा इसके लिये किडनी को रक्त पहुंचाने वाली धमनियों को स्वस्थ रखना मुख्य रूप से चिकित्सा का उद्देश्य होता है। किडनी के बचाव हेतु स्वस्थ आदमी को शुद्ध जल का सेवन अधिक मात्रा में करते रहना चाहिये। परन्तु यदि किडनी रोग स्टेज 4/5 तक पहुंच गया हो तो पानी, प्रोटीन, फल इत्यादि वस्तुओं का सेवन कम करना चाहिये तथा चिकित्सक से सलाह लेनी चाहिये। मुख्यरूप से रक्त में सोडियम, पोटैशियम या फॉस्फोरस एवं प्रोटीन की मात्रा को नियंत्रित किया जाता है।

वृक्क (किडनी–kidney) की रचना एवम् कार्य

डा0 विजय लक्ष्मी गौतम, एसोशियेट प्रोफेसर, रचना शारीर विभाग

मानव शरीर; स्त्री एवम् पुरुष मे सामान्यतयः दो वृक्क होते हैं, इसके रचना एवम् कार्य एक समान होते है। यह उदर के अंदर पीछे के हिस्से में रीढ़ की हडडी 12– वक्षीय और 3–उदर (लंबर) के दोनो

तरफ; पीठ के भाग मे छाती की नीचे की पसलियो मे स्थित सुरक्षित अंग हैं, जिसके कारण बाहर से स्पर्श करने पर महसूस नही होती। वृक्क का आकार राजमा बीज जैसा होता है। वयस्कों में एक वृक्क लगभग 10 सेंटीमीटर लम्बा, वृक्क द्वारा निर्मित मूत्र को मूत्राशय तक पहुंचाने वाली नली को मूत्रवाहिनी/गवीनी कहते है। इसकी लम्बाई सामान्यतयः 25 सेंटीमीटर होती है तथा यह लचीली मांसपेशियों; तीन स्तर से बनी होती हैं। मूत्राशय, मूत्र के लिये एक अस्थायी भण्डार गृह है। मूत्राशय पेट के निचले हिस्से मे पेल्विक कैविटी मे, प्यूबिक सिम्फाईसिस के पीछे और पैराइटल पेरीटोनियम के नीचे स्थित होते है । इसका साइज, आकार आदि मूत्र की, मात्रा पर निर्भर करती है। मूत्राशय के अंदर दो कलाएं रुगी एवम् डेट्रूसर (mucous membrane with folds called rugae & smooth muscle in the wall is detrusor muscle) होती है इन दोनो के संकुचन के कारण मूत्र, मूत्राशय से बाहर आता है। मूत्राशय के सतह पर त्रिकोणीय (trigone, in the floor of urinary bladder) जो दो मूत्रगवीनी एवम् अन्तः मूत्रच्छिद्र में खुलता हैं। मूत्रच्छिद्र एक पतली नलिका के रुप मे होती है, स्त्रियों के मूत्रमाग की लम्बाई पुरुषों की तुलना मे कम होती है जिसकी लम्बाई सामान्यतः 3–4 सेंटीमीटर; 1.5 इंच होती हैं। पुरुषों में मूत्रमार्ग की लम्बाई 20 सेंटीमीटर; 7–8 इंच होती हैं। इसकी कम लम्बाई के कारण स्त्रियों में मूत्रवह संकमण (urinary tracts infections-UTIs) पुरुषों की तुलना मे ज्यादा होते हैं।

वृक्क के कार्यः–

1 वृक्क शरीर के अनावश्यक द्रव्यों और पदार्थों किएटेनिन और यूरिया को मूत्र द्वारा दूर कर खून का शुद्धिकरण करता हैं।
2 शरीर में क्षार एवं अम्ल का संतुलन कर खून में उचित मात्रा बनाए रखता हैं।
3 शरीर में पानी का संतुलन।
4 एरिथ्रोपोएटिन द्वारा रक्तकणों के उत्पादन में सहायता।
5 हड्डियों की मजबूती बनाए रखने के लिए वृक्क विटामिन डी को सक्रिय रुप में परिवर्तित करती हैं।
6 खून के दबाव पर नियंत्रण एंजियोटेंसिन, एल्डोस्टेरौन एवं प्रोस्टाग्लैंडिन इत्यादि हारमोन द्वारा होता है।

वृक्क की संरचना एवं क्रिया

डॉ0 टीना सिंघल, प्रवक्ता – रचना शारीर विभाग, रा0आ0म0, वाराणसी

वृक्क या गुर्दे का प्रधान कार्य मूत्र उत्पादन एवं रक्त शोधन करना है। गुर्दे मूत्र प्रणाली के अंग हैं। इनके द्वारा इलेक्ट्रोलाइट, क्षार–अम्ल संतुलन और रक्तचाप का नियमन होता है। ये शरीर में रक्त के प्राकृतिक शोधक के रूप में कार्य करते हैं और अपशिष्ट को हटाते हैं, जिसे मूत्राशय की ओर भेज दिया जाता है। मूत्र का उत्पादन करते समय गुर्दे यूरिया और अमोनियम जैसे अपशिष्ट पदार्थ उत्सर्जित करते हैं, गुर्दे जल, ग्लूकोज और अमिनो अम्लों के पुनरावशोषण के लिये भी जिम्मेदार होते हैं। गुर्दे हार्मोन भी उत्पन्न करते हैं, जिनमें कैल्सिट्रिओल, रेनिन और एरिथ्रोपिटिन शामिल हैं।

शरीर में वृक्क की स्थिति– मनुष्यों में गुर्दे उदर गुहा में रेट्रोपेरिटोनियम नामक रिक्त स्थान में स्थित होते हैं। इनकी संख्या दो होती है और इनमें से एक–एक गुर्दा मेरूदण्ड के दोनों तरफ एक स्थित होता है। दायां गुर्दा मध्यपट के ठीक नीचे और यकृत के पीछे स्थित होता है, तथा बायां मध्यपट के नीचे और प्लीहा के पीछे होता है। प्रत्येक गुर्दे के शीर्ष पर एक अधिवृक्क ग्रंथि होती है। यकृत के कारण उदर गुहा में पाई जाने वाली विषमता के कारण दायां गुर्दा बाएं की तुलना में थोड़ा नीचे होता है और बायां गुर्दा दाएं की तुलना में थोड़ा अधिक मध्यम में स्थित होता है। गुर्दे के उपरी भाग की आंशिक रूप से ग्यारहवीं व बारहवीं पसली द्वारा सुरक्षा की जाती है और पूरा गुर्दा तथा अधिवृक्क ग्रंथि वसा तथा वृक्क पट्टी द्वारा ढंके होते हैं। प्रत्येक वयस्क गुर्दे का भार पुरूषों में 125 से 170 ग्राम के बीच और महिलाओं में 115 से 155 ग्राम के बीच होता है। विशिष्ट रूप से बायां गुर्दा दाएं की तुलना में थोड़ा बड़ा होता है। गुर्दा लगभग 11–14 सेमी लंबा, 6 सेमी चौड़ा और 3 से.मी. मोटा होता है।

गुर्दे की संरचना सेम के आकार की होती है, प्रत्येक गुर्दे में अवतल और उत्तल सतहें पाई जाती हैं। अवतल सतह, जिसे वृक्कीय नाभिका कहा जाता है, वह बिंदु है, जहां से वृक्क धमनी इस अंग में प्रवेश करती है और वृक्क शिरा तथा मूत्रवाहिनी बाहर निकलती है। गुर्दा सख्त रेशेदार उतकों, वृक्कीय कैप्सूल से घिरा होता है, जो स्वयं पेरिनेफ्रिक वसा, वृक्क पट्टी तथा पैरानेफ्रिक वसा से घिरी होती है। इन उतकों की अग्रवर्ती सीमा पेरिटोनियम है, जबकि पश्च सीमा ट्रांसवसैलिस पट्टी है। गुर्दे का पदार्थ या जीवितक दो मुख्य संरचनाओं में विभक्त होता है, उपरी भाग में वृक्कीय छाल और इसके भीतर वृक्कीय मज्जा होती है। कुल मिलाकर ये संरचनाएं शंकु के आकार के आठ से अठारह वृक्कीय खण्डों की एक आकृति बनाती हैं, जिनमें से प्रत्येक में मज्जा के एक भाग को ढंकने वाली वृक्क छाल होती है, जिसे वृक्कीय पिरामिड कहा जाता है।

नेफ्रॉन, गुर्दे की मूत्र उत्पन्न करने वाली कार्यात्मक संरचनाएं, छाल से लेकर मज्जा तक फैली होती हैं। एक नेफ्रॉन का प्रारंभिक शुद्धिकरण पिरामिडों में गहराई तक जानी वाली एक वृक्की नलिका पाई जाती है। एक मज्जात्मक किरण, वृक्कीय छाल का एक भाग, वृक्कीय नलिकाओं का एक समूह होता है, जो एक एकल संग्रहण नलिका में जाकर रिक्त होती हैं। प्रत्येक पिरामिड का सिरा, या अंकुरक मूत्र को लघु पुटक में पहुंचाता है, लघु पुटक मुख्य पुटकों में जाकर रिक्त होता है और मुख्य पुटक वृक्कीय पेडू में रिक्त होता है, जो कि मूत्रनलिका बन जाती है।

रक्तचाप नियमन और रेनिन–एंजियोटेंसिन सिस्टम–लंबी अवधि में रक्तचाप का नियंत्रण मुख्यतः गुर्दे पर निर्भर होता है। मुख्यतः ऐसा कोशिकेतर द्रव उपखंड के अनुरक्षण के माध्यम से होता है, जिसका आकार प्लाज्मा सोडियम सान्द्रता पर निर्भर करता है। हालांकि, गुर्दे सीधे ही रक्तचाप का अनुमान नहीं लगा सकते, लेकिन नेफ्रान के दूरस्थ भागों में सोडियम और क्लोराइड की सुपुर्दगी में परिवर्तन गुर्दे द्वारा किये जाने वाले किण्वक रेनिन के स्राव को परिवर्तित कर देता है। जब कोशिकेतर द्रव उपखण्ड विस्तारित हो और रक्तचाप उच्च हो, तो इन आयनों को सुपुर्दगी बढ़ जाती है और रेनिन का स्राव घट जाता है। इसी प्रकार, जब कोशिकेतर द्रव उपखण्ड संकुचित हो और रक्तचाप निम्न हो, तो सोडियम और क्लोराइड की सुपुर्दगी कम हो जाती है और प्रतिक्रियास्वरूप रेनिन स्राव बढ़ जाता है। जब रेनिन के स्तर बढ़े हुए होते हैं, तो एंजियोटेन्सिन–2 और एल्डोस्टेरॉन की सान्द्रता बढ़ जाती है, जिसके परिणामस्वरूप सोडियम क्लोराइड के पुनरावशोषण में वृद्धि होती है, कोशिकेतर द्रव उपखण्ड का विस्तार होता है और रक्तचाप बढ़ जाता है। इसके विपरीत, जब रेनिन के स्तर निम्न होते हैं, तो एंजियोटेन्सिन–2 और एल्डोस्टेरॉन के स्तर घट जाते हैं, जिससे कोशिकेतर द्रव उपखण्ड का संकुचन होता है और रक्तचाप में कमी आती है।

हार्मोन स्राव–गुर्दे अनेक प्रकार के हार्मोन का स्राव करते हैं, जिनमें एरिथ्रोपीटिन, कैल्सिट्रिऑल और रेनिन शामिल है। एरिथ्रोपीटिन को वृक्कीय प्रवाह में हाइपॉक्सिया की प्रतिक्रिया के रूप में छोड़ा जाता है। यह अस्थि मज्जा में एरिथ्रोपोएसिस को उत्प्रेरित करता है। कैल्सिट्रिऑल, विटामिन डी का उत्प्रेरित रूप, कैल्शियम के आन्त्र अवशोषण तथा फॉस्फेट के वृक्कीय पुनरावशोषण को प्रोत्साहित करता है। रेनिन, जो कि रेनिन–एंजिओटेन्सिन–एल्डोस्टैरॉन तंत्र का एक भाग है, एल्डोस्टेरॉन स्तरों के नियंत्रण में शामिल एक एंजाइम होता है।

प्रमुख बीमारियां एवं विकार– जन्मजात हाइड्रोनेफ्रॉसिस, मूत्रवाहिनी का जन्मजात अवरोध, दोहरी मूत्रवाहिनी, घोड़े की नाल जैसा गुर्दा, बहुपुटीय गुर्दे की बीमारी,वृक्कीय अनुत्पत्ति।

मधुमेह जनित तंत्रिकाओं की क्षति (डायबेटिक न्यूरोपैथी)

प्रो0 हरि हृदय अवस्थी, रचना शारीर विभाग

तंत्रिका (या नर्व) रस्सीनुमा संरचनाओं को कहते हैं, जो मस्तिष्क व सुषुम्ना नाड़ी को शरीर के अन्य अंगों से जोड़ती है। तंत्रिकाएं पीड़ा तथा तापमान जैसी संवेदनाएं मस्तिष्क तक और विभिन्न प्रकार की सूचनाएं मस्तिष्क से अन्य अंगों तक पहुंचाती हैं, जिनसे शरीर की विभिन्न क्रियाओं का संचालन एवं नियंत्रण होता है। मधुमेह के कारण तंत्रिकाओं में जो विकार आ जाता है, उसे मधुमेह जनित तंत्रिकाओं की क्षति कहते हैं। जब मधुमेह लम्बे समय तक रहता है, तो तंत्रिकाएं तथा उन तक ऑक्सीजन व पोषक तत्व लाने वाली रक्त धमनियां क्षतिग्रस्त हो जाती हैं।

आम तौर पर मधुमेह जनित तंत्रिकाओं की क्षति के लक्षण उस अंग पर निर्भर करते है जिसकी तंत्रिकाएं क्षतिग्रस्त हुई हैं, किन्तु शरीर का कोई भी भाग मधुमेह जनित तंत्रिकाओं की क्षति से प्रभावित हो सकता है।

कारण– रक्त में शर्करा की मात्रा का अनियंत्रित रहना व लम्बे समय तक मधुमेह का होना।

अन्य कारण–

- आयु– 40 वर्ष की आयु के बाद ये रोग अक्सर पाया जाता है।
- रक्त में वसा (चिकनाई) की अत्यधिक मात्रा।
- जीवनशैली – संबंधी कारक, जैसे धूम्रपान अथवा मदिरापान।
- वजन का अधिक होना (मोटापा)।

लक्षण– कुछ रोगियों में लक्षण पाए जाते हैं, कुछ में नहीं। सबसे मुख्य लक्षण है –

- दर्द निरंतर दर्द रहना, जोड़ो में अकड़न, छूने पर दर्द होना।
- हाथों व पैरों की उंगलियों का सुन्न पड़ जाना, उनमें झनझनाहट या दर्द होना।
- पैरों में सूजन आना व संवेदनाओं का कम हो जाना तथा सुन्न पड़ जाना।
- अचानक उठने या खड़े होने पर रक्तचाप गिरने के कारण चक्कर या बेहोशी आना।
- कब्ज/दस्त

- पेशाब करने में तकलीफ।

बचाव–

- रक्त–शर्करा की नियमित निगरानी । मधुमेह को नियंत्रण में रखें। दवाओं का नियमित सेवन करें।
- आहार तथा जीवनशैली से सुधार करें।
- आहार के साथ विटामिन आदि पूरक पदार्थ लें।
- नियमित व्यायाम/योग करें।
- लेटी हुई अवस्था से धीरे–धीरे उठ कर बैठे या खड़े हों।

पैरों की देखभाल– मधुमेह में संवेदनाओं के अभाव के कारण पैर में लगी चोट या घाव का पता नहीं चलता, जिससे समस्या बढ़ती जाती है। अपने पैरों का नियमित रूप से निरीक्षण करें व कोई भी समस्या होने पर अपने चिकित्सक से परामर्श करें।

मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी

डा0 मो0 अशरफ खान शोध छात्र, प्रो0 हरि हृदय अवस्थी, रचना शारीर विभाग

आंख के पर्दे पर मधुमेह का प्रभाव पड़ने पर उनकी रक्तवाहिनियों से रक्त का स्राव होने लगता है, जिससे पर्दे को क्षति पहुंचती है। इसे मधुमेह जनित आंख के पर्दे का रोग कहा जाता है।

प्रकार – डायबिटिक रेटिनोपैथी के दो प्रकार होते हैं। पहला बैकग्राउण्ड डायबिटिक रेटिनोपैथी और दूसरा प्रोलिफरेटिव डायबिटिक रेटिनोपैथी।

बैकग्राउण्ड रेटिनोपैथी – इसमें आंख के पर्दे के अंदर रक्तवाहिनियां में सूजन हो जाती है और रक्त का स्राव होने लगता है। इस रोग में पर्दे के टिश्यूज में सूजन आ जाने के कारण एक्सयूडेट्रस नामक पदार्थ जमा होने लगता है जिसका स्वरूप पीले रंग का होता है। मैक्युला पर स्राव होने के कारण वह सूक्ष्म दृष्टि पर असर डालता है और गंभीर रोग उत्पन्न करता है।

प्रोलिफरेटिव रेटिनोपैथी –इस रोग में ऑप्टिक नर्व या विट्रीअॅस पर असामान्य नई रक्त वाहिनियां फैलने लगती है। इन रक्त वाहिनियां के जाल फटने पर इनसे रक्त का स्राव होने लगता है, जो विट्रीअॅस जेली में भर जाता है, जिसके कारण रोशनी आंख के पर्दे पर नहीं पड़ती। कभी–कभी रक्त के भर जाने के कारण विट्रीअॅस जेली में खिंचाव पैदा होता है, जिससे पर्दा अपने निश्चित स्थान से हट जाता है। इस रोग को ट्रैक्शन रेटिनल डिटेचमेंट कहते हैं। जिसके कारण दृष्टि हीनता या पूर्ण अंधापन भी हो जाती है। कभी–कभी इस रोग के साथ काला मातिया भी उत्पन्न हो जाती है।

लक्षण

1. मैक्युला में सूजन के कारण दृष्टि का कमजोर होना।
2. अचानक मकड़ी के जाल या मच्छर जैसी आकृतियां दिखायी देने लगती है।
3. रक्तस्राव के अधिक होने के कारण पूर्ण अंधापन हो सकता है।

उपयोगी बातें– कभी–कभी मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी के रोगियों में लक्षण व्यक्त नहीं होते इसलिए नियमित रूप से मधुमेह के रोगीयों को अपना नेत्र परीक्षण (पर्दे की जांच) अवश्य करवाना चाहिए क्योंकि यदि रक्तस्राव होने से पहले ही इसका पता लग जाए, तो बचाव संभव है।

आवश्यक परीक्षण– मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी के लिए रेटिना का रंगीन फोटो और फ्लोरेसिन एंजियोग्राफी नामक जांचें कराई जाती है। इस जांच में आंख में दवा डालकर पुतली को फैलाया जाता है तथा फ्लोरेसिन डाई का इंजेक्शन लगाते हैं, फिर दवा आंख के पर्दे की नसों से पहुंचते ही आंख के पर्दे की फोटो खींची जाती है। इस टेस्ट से यह निर्धारित होता है कि लेजर व इंजेक्शन द्वारा उपचार करने की आवश्यकता है या नहीं ?

ऑप्टिकल कोहीरेंस टोमोग्राफी – यह अत्याधुनिक जांच है जिसके द्वारा पर्दे की भीतरी पर्तों की जांच संभव है।

आधुनिक चिकित्सा– इसके अंतर्गत विभिन्न विधियों का प्रयोग किया जाता है। लेजर फोटो कोएगुलेशन द्वारा लेजर की किरणों से आंख की नसों से रक्तस्राव को रोकने के लिए रक्तवाहिनियों को सील कर दिया जाता है। लेजर चिकित्सा द्वारा रक्तस्राव को रोकने से दृष्टि में सुधार आता है। लेजर चिकित्सा की आवश्यकता रोग की गंभीरता पर निर्भर करती है।

इंजेक्शन– आजकल कुछ दवाओं से संबंधित इंजेक्शन भी आंख में लगाए जाते हैं, जो मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी में होने वाले परिवर्तनों को रोकने में सहायक हैं।

शल्य चिकित्सा– रक्त भरने के कारण पारदर्शी विट्रीअॅस जेल धुंधला हो जाता है या ट्रैक्शनल रेटिनल डिटेचमेंट हो जाता है, तो लेजर चिकित्सा काम नहीं करता। ऐसी स्थिति में शल्य चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

नियमित जांच ही बचाव का मार्ग है– मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी का पता लगने के उपरान्त मधुमेह को नियंत्रित किया जाए। इसके लिए अपने पास ग्लूकोमीटर रखें ताकि अपने ब्लड शुगर की शीघ्र ही जाचं कर सके और फिर डॉक्टर के परामर्श से ले। इसके साथ ही हाई ब्लड प्रेशर और बढ़े हुए कोलेस्ट्रॉल तथा किडनी से संबंधित बीमारी को नियंत्रण में रखना आवश्यक है। मधुमेह जनित (डायबिटिक) रेटिनोपैथी का जितनी जल्दी से जल्दी पता चल जाए, उतना अच्छा है। यह तभी संभव है जब आंख की जांच खासकर पर्दे की जांच साल में कम से कम एक बार या नेत्र विशेषज्ञ के सुझाव के अनुसार होती रहे।

प्रकृति के अनुसार प्रमेह रोगी में व्यायाम का महत्व

डॉ0 सुषमा तिवारी, प्रवक्ता, राजकीय आयुर्वेद कालेज, हंडिया
प्रो0 संगीता गहलोत, किया शारीर विभाग

प्रमेह जीवन शैली का यथोचित सेवन ना करने के कारण उत्पन्न होने वाला एक महत्वपूर्ण रोग है। आयुर्वेद का उद्देश्य स्वस्थ मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा तथा रोगी के रोग का शमन करना है। अतः प्रमेह के नियन्त्रण के लिये व्यायाम अति आवश्यक है। व्यायाम के रूप में तीव्र गति से पैदल चलना स्वस्थ एवं प्रमेह रोगी के लिये अति आवश्यक है। आयुर्वेद में प्रमेह रोग के कारण, पूर्वरूप, लक्षण, सम्प्राप्ति, साध्यासाध्याता एवं चिकित्सा का विस्तृत वर्णन है। आचार्य सुश्रुत के अनुसार प्रमेह रोगी को 100 योजन या उससे अधिक चलना चाहिये। प्रमेह रोग में पैदल चलने के प्रभाव का निर्धारण करने के लिये किया शारीर विभाग आयुर्वेद संकाय में एक अध्ययन किया गया।

सभी प्रतिभागियों का पंजीकरण करने के बाद उनकी प्रकृति निर्धारित की गयी। इस अध्ययन में भाग लेने वाले प्रतिभागियों को दो वर्गों में विभाजित किया गया। सभी प्रतिभागियों की उम्र 35 से 65 वर्ष थी। एक वर्ग के रोगीयों को 30 मिनट प्रतिदिन पैदल चलने के लिये कहा गया जबकि दूसरे वर्ग के प्रमेह रोगियों ने कोई व्यायाम नहीं किया। यह अध्ययन तीन महीने तक चला। तीन महीने के बाद यह पाया गया कि वात–पित्त प्रकृति वाले प्रमेह रोगीयों को 4–6 किलोमीटर पैदल चलने से उनके रक्त शर्करा की मात्रा कम हो जाती है। तथा इसके साथ उनका रक्तचाप भी नियन्त्रित रहता है। प्रमेह रोगियों के जिस वर्ग के मनुष्यों ने चंकमण नहीं किया उन मनुष्यों में उच्च रक्तचाप तथा शर्करा का स्तर बढ़ा हुआ मिला। पैदल चलना एक आइसोटोनिक व्यायाम है जो प्रत्येक उम्र के व्यक्तियों के लिये लाभदायक है तथा लम्बे समय तक किया जा सकता है। व्यायाम हमारे शरीर की क्रियाओं को संतुलित रखता है तथा वसा का नियन्त्रण करता है। वात–पित्त प्रकृति वाले प्रमेह रोगीयों में परिणाम अच्छा मिला क्योंकि वात प्रकृति के मनुष्यों में रज गुण प्रधान होता है। जिसके कारण वह अपनी चिकित्सा के प्रति जागरूक रहता है तथा रज गुण प्रधान होने के कारण चिकित्सालय नियमित रूप से आता है इसलिये वात प्रकृति मनुष्यों में अच्छा परिणाम मिला तथा पित्त प्रकृति वाले मनुष्य प्रत्येक प्रकार के प्रतिक्रिया के लिये प्रवृत्त होते है। इसलिये यदि वात पित्त प्रकृति के व्यक्ति नियमित रूप से 4–6 किलोमीटर पैदल चले तो ये प्रमेह रोग से छुटकारा पा सकते है। अतः स्वस्थ और रोगी दोनों ही व्यक्तियों को नियमित रूप से व्यायाम करना चाहिये जिससे वह उच्च रक्तचाप एवं प्रमेह दोनों को नियन्त्रित कर सकते हैं। व्यायाम के साथ – साथ प्रमेह को नियन्त्रित करने के लिये आहार की मात्रा को निर्धारित करना भी अति आवश्यक है, इसलिये प्रमेह के रोगियों को 1600 कैलोरी से अधिक भोजन नहीं करना चाहिये।

आयुर्वेद चिकित्सा विज्ञान होने के कारण रोग की उत्पत्ति होने पर उसकी चिकित्सा के प्रयोजन हेतु आहार विहार और औषध प्रयोग हेतु व्यक्ति की प्रकृति के ज्ञान का होना नितान्त आवश्यक है। रोग की साध्यासाध्यता के ज्ञान के लिये भी प्रकृति का ज्ञान अति उपयोगी है। अतः प्रकृति का ज्ञान रखते हुये तथा साध्यासाध्यता का विचार करते हुये प्रमेह रोगी की चिकित्सा की जाये तो यह रोगी के लिये अत्यन्त लाभकारी होता है एवं इसके द्वारा प्रमेह रोग को कम किया जा सकता है।

प्रमेह – डा0 अजय पाण्डेय, असिस्टेंट प्रोफेसर, काय चिकित्सा विभाग

प्रमेह शद्व प्र उपसर्गपूर्वक मिहरक्षणे धातु से धम् प्रत्यय करने पर बना है जिसका अर्थ है प्रचुर मात्रा में विकृत मूत्र का परित्याग करना।

प्रमेह रोग यद्यपि त्रिदोषज व्याधि है तथापि दोष बाहुल्य के आधार पर प्रमेहवातिक पैत्तिक और श्लेष्मिक भेद से तीन प्रकार का होता है सभी प्रमेहों में मूत्र वह संस्थान की विकृति मानी गयी है। अत्यधिक मात्रा में बार–बार गंदलेमूत्र का त्याग ही प्रमेह कहलाता है।

प्रमेह निदान

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि ग्राम्यौदकानूपरसाः प्यांसि। नवान्नंपानं गुडवैकृतं च प्रमेह हेतुः कफकृच्च सर्वम्।।

सुखकारक आसनों पर बैठना, स्वप्न सुख अर्थात सुख दायक गुदगुदे आसन पर अधिकाधिक निद्रासुख प्राप्त करना, दही, ग्राम्य, जलीय और आनूप पशु–पक्षियों के मांस का अधिक रूप में सेवन करना,

दूध का अधिक सेवन करना, नूतन अन्न, नूतन जल, गुड़ के विकार यथा – हलुआ, मालपुआ, मिष्ठान आदि का सेवन तथा समस्त कफवर्धक पदार्थो के सेवन करने से प्रमेह की उत्पत्ति होती है।

प्रमेहों के निदानों में कफवर्धक आहार एवं विहार की प्रधानता है। सुश्रुत प्रमेह निदानों का वर्णन करते हुए लिखते है कि दिन में शयन करना, व्यायाम नहीं करना तथा आलस्य युक्त पुरूष को तथा शीतल, स्निग्ध, मधुर, मेदावर्धक तथा द्रव प्रधान अन्न का अतिमात्र सेवन करने वाले मनुष्य को प्रमेह अधिक होती है।

चरक ने कफज, पित्तज एवं वातज के आधार पर प्रमेह के 20 प्रकार बताए हैं –

कफज	पित्तज	वातज
1. उदकमेह	1. क्षारमेह	1. वसामेह
2. इक्षुवालिकारसमेह	2. कालमेह	2. मज्जामेह
3. सान्द्रमेह	3. नीलमेह	3. हस्तिमेह
4. सान्द्रप्रसादमेह	4. लोहितमेह	4. मधुमेह
5. शुक्लमेह	5. मंजिष्ठामेह	
6. शुक्रमेह	6. हारिद्रमेह	
7. शीतमेह		
8. सिकतामेह		
9. शनैमेह		
10. आलालमेह		

प्रमेह सामान्य लक्षण –

प्रमेहपूर्वरूपाणामाकृतिर्यत्र दृश्यते। किंचिच्चाप्याधिकं मूत्रं तं प्रमेहिणमादिशते्
कृत्स्न्नान्यर्धानि वा यस्मिन् पूर्वरूपाणि मानवे। प्रवृत्त मूत्रमत्यर्थं तं प्रमेहिणमादिशेत्।। सु0 नि0 6/24–25।।

प्रमेह के पूर्वरूपों की जिसमें अभिव्यक्ति हो तथा मूत्र भी कुछ अधिक हो उस मनुष्य को प्रमेही कहना चाहिये। जिस मनुष्य में प्रमेह के समस्त या अधिक पूर्वरूप हों तथा मूत्र की प्रवृत्ति भी बहुत हो उसको प्रमेही कहना चाहिए।

सम्प्राप्ति –

1. सभी तरह के प्रमेह उचित समय पर समुचित चिकित्सा न किये जाने पर मधुमेह का रूप धारण कर लेते हैं।
2. स्व–प्रकोपक कारणों से प्रकुपित वायु जब रूक्षता के कारण कषाय रस से मिलकर मधुर स्वभाव वाले ओज को मूत्राशय में ले जाती है, तब मधुमेह को उत्पन्न करती है।
3. कफ और पित्त जब वात की अपेक्षा न्यून होते है, तब बढ़ा हुआ वायु धातुओं को मूत्राशय में खींचकर ले आता है एवं वातज प्रमेहों को उत्पन्न करता है।

चिकित्सा सूत्र

1. निदान का दृढ़तापूर्वक परित्याग करना चाहिए।
2. स्थूल रोगी का संशोधन और कृश का संशमन उपचार करें।
3. विधिवत स्नान करना और सुबह शाम टहलना आवश्यक है।
4. भोजन में चीनी, चावल, आलू और मिठाई का सेवन छोड़ दें।
5. औषध एवं आहार में तिक्तरस प्रधान द्रव्यों का प्रयोग करें।
6. मधुर–अम्ल–लवण रसों का त्याग और रूक्ष एवं कटु, तिक्त, कषाय रसों का सेवन करना हितकर है।
7. सूर्य की धुप और खुली वायु में कुछ श्रम का कार्य करना चाहिए।

चिकित्सा

1. **स्वरस** – बिल्वपत्र, त्रिकोलपत्र, निम्बपत्र, कच्ची हल्दी, कच्चा आंवलाफल, करेलाफल, प्याज इत्यादि इसमें जो सुलभ हो उसे सिल पर पीसकर कपड़े से छानकर स्वरस निकाल कर सुबह – शाम 10–20 मि.लि सेवन करें।
2. **चूर्ण** – जामुन की गुठली, बरियार का बीज, गूलर की छाल, आम की गुठली, गुडमार, लामज्जक, त्रिफला निर्बीज इनमें से सबको सम भाग लेकर चूर्ण बनाकर 3–4 ग्राम सुबह – शाम सेवन करें।
3. त्रिफलादि क्वाथ
4. शालसारादिगण, शिलाजतु प्रयोग, न्यग्रोधादि चूर्ण इत्यादि के सेवन से प्रमेह नियन्त्रित रहता है।

पथ्य – पैदल चलना, व्यायाम करना, सांवा, दांगुन, कोदों, जौ, चना, वांस का चावल, मूंग, अरहर, परवल, करेला, चौलाई, पालक, प्याज, लहसून, कच्चा केला, जामुन इत्यादि का सेवन पथ्य है। शारीरिक श्रम और पैदल चलना अति लाभकर हैं।

अपथ्य – मूत्रवेगावरोध, रक्तमोक्षण, आरामदेह गद्दे पर या आराम कुर्सी पर सोये या बैठे रहना, दिन में सोना, नया अन्न, दही, मिठाई, मधुर अम्ल लवण पदार्थो का सेवन, आनूपमांस, मैथुन और विरूद्ध भोजन ये सब अपथ्य हैं।

वृक्क रोगों से सम्बन्धित निदान, परीक्षण एवं निष्कर्ष

प्रदीप कुमार पाल शोध छात्र, प्रो0 हरि हृदय अवस्थी, रचना शारीर विभाग

वृक्क का सम्बन्ध हमारे उत्सर्जन तंत्र से है। यह शरीर में बहते हुये रक्त में उपस्थित उपापचयिक अपद्रव्य एवं अन्य हानिकार व विषाक्त पदार्थों को छानकर मूत्र के माध्यम से शरीर से बाहर निकालते है। वृक्कों की क्रियाशीलता एवं कार्यकुशलता का आंकलन कुछ नैदानिक परीक्षणों द्वारा किया जाता है जिन्हें रीनल फंक्शन टेस्ट के नाम से जानते है। इन परीक्षणों की सामान्य सीमा से कम या अधिक का होना वृक्क रोगों को दर्शाता है।

1. रीनल फंक्शन टेस्ट के उद्देश्य –

- वृक्क रोग निदान हेतु।
- नष्ट वृक्क भाग एवं इसकी गम्भीरता की जानकारी हेतु।
- वृक्क रोगों के विभिन्न स्तरों में अग्रसर होने एवं सुधार हेतु।

2. रीनल फंक्शन टेस्ट (RFT) जानकारी देता है –

- वृक्कीय परिसंचरण की
- ग्लोमेरूलर फिल्ट्रेशन की
- वृक्कीय नलिकाओं की सक्रियता की

3. रीनल फंक्शन टेस्ट (RFT) की अवस्थायें – 4 वर्गों में विभाजित किया जाता है –

- मूत्र परीक्षण
- सान्द्रता परीक्षण
- रक्तगत रासायनिक परीक्षण
- वृक्क शुद्धता परीक्षण

मूत्र परीक्षण

1.भौतिक परीक्षण

मात्रा – 500–2500 मि.ली./प्रतिदिन

वर्ण – हल्के पीत वर्ण का भूसे जैसा। सफेद दिखना – नेफ्रोटिक सिन्ड्रोम एवं प्रोटीन यूरिया में।

पी0एच0 – अम्लीय 4.5–6.8, यदि क्षारीय – ग्लूकोज की उपस्थिति सम्भव।

विशिष्ट घनत्व – 1.003–1.030 – अधिक मात्रा अधिक सान्द्रता को प्रदर्शित करती है।

2.रसायनिक परीक्षण – ग्लोमेरूलर झिल्ली की छानने की क्षमता।

मूत्रीय प्रोटीन– सामान्यतः अनुपस्थित

मूत्रीय क्रिएटिनिन – यूरीन प्रोटीन एवं यूरीन क्रिएटिनिन अनुपात 0.3 सामान्य

शर्करा की उपस्थिति – सामान्यतः अनुपस्थित – रीनल थ्रेसहोल्ड पार कर जाने पर आता है।

मूत्रीय जीवाणु – 105/ मि.ली. से अधिक की उपस्थित धनात्मक (पाजिटिव)

3.मूत्रगत सूक्ष्म परीक्षण– डब्ल्यू0बी0सी0, एच0पी0एफ0, आर0बी0सी0, इपीथिलियल सेल सामान्यतः 0–1 उपस्थित, कास्ट एवं क्रिस्टल अनुपस्थित।

रक्तगत रासायनिक परीक्षण

- ✓ रक्तगत यूरिया एवं नाइट्रोजन (BUN)– यूरिया–20–40, एवं BUN 8-25 मि.ग्रा. प्रति डेसी लीटर
- ✓ क्रिएटिनिन की अवस्था – सामान्य 0.6–1.3 मि.ग्रा. प्रति डेसी लीटर
- ✓ यूरिक एसिड – सामान्य 2.4–7 मि.ग्रा. प्रति डेसी लीटर
- ✓ रीनल क्लीरैन्स टेस्ट 1 मि.ली. प्रति मिनट
- ✓ जी.एफ.आर. सामान्य 120 +/– 25 मि.ली. प्रति मिनट, 125 मि.ली. प्रति मिनट
- ✓ सी.सी.टी.– 90–130 मि.ली. प्रति मिनट

वृक्कीय अश्मरी में पथ्य अपथ्य (क्या खाये, क्या न खायें), आहार एवं विहार (क्या करें क्या न करें)

क्या खायें – अधिक जल सेवन, जौ, कुलथी, पुराना शालि चावल, मद्य, पुराना कूष्माण्ड फल (पेठा) गोखरू, वरूण शाक, अदरक, पाषाण भेद, यवक्षार, शालपर्णी।

क्या करें – बस्ति कर्म, विरेचन, वमनकर्म, लंघन, स्वेदन, जल अवगाहन।

क्या न खायें – अम्लीय पदार्थ, विष्टम्भी पदार्थ, रूक्ष गुरू अन्न पान एवं विरूद्ध अन्नपान का सेवन पूर्णतः न करें।

क्या न करें – मूत्र एवं शुक्र के वेग को धारण न करें अतिशीघ्र त्याग करें।

वृक्क अश्मरी (Kidney stone) मे उपचारात्मक आहार

वीना, पी.एच.डी. स्कॉलर, डॉ0 वन्दना वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, क्रिया शारीर विभाग,

वृक्क मे ऑक्जलेट, कैल्शियम, प्यूरीन, फॉस्फेट की अधिकता से वृक्क अश्मरी जैसा रोग उत्पन्न होता है जिसे गुर्दे की पथरी, रीनल कैलक्युलस तथा नेफ्रो कैलसिनोसिस के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा अत्यधिक चाय का सेवन, गरिष्ठ भोजन, मद्यपान, मिष्ठान, क्षारयुक्त पदार्थ, नमक, साग–सब्जी, दूध तथा पानी का कम मात्रा मे ग्रहण करना, धूप मे काम करना, जल की अधिक मात्रा का पसीने के रुप मे बाहर निकल जाना (dehydration) आदि के कारण भी यह रोग हो सकता है। इस रोग मे कमर दर्द अधिक रहता है जिसे रीनल कोलिक कहते है।

वृक्क अश्मरी के प्रकार– वृक्क अश्मरी कई प्रकार की होती है। जैसे कैल्शियम ऑक्जलेट, कैल्शियम कार्बोनेट, कैल्शियम फॉस्फेट, यूरिक एसिड, म्यूको पौली सैकाइड, सिस्टीन, स्टूवाईट की पथरी, यूरिक एसिड, या मैग्नीशियम अमोनियम फॉस्फेट। प्रायः यूरिक एसिड व कैल्शियम ऑक्जलेट के पथरी ही देखने को मिलते है।

आयुर्वेद मे श्लेष्मा का आश्रय करके उत्पन्न अश्मरी निम्न चार प्रकार की बताई गई है

कफाश्मरी– रंग मे सफेद, स्पर्श मे चिकनी, आकार मे बड़ी, तथा स्वरुप मे मुर्गे के अण्डे के समान ।

वाताश्मरी– रंग मे सांवली, स्पर्श मे कठोर, टेड़ी–मेड़ी, खुरदरी, तथा रचना मे कदम्ब के फूल के समान कांटो सरीखी।

पित्ताश्मरी– रंग मे लाल, पीली, काली, भिलावे की गुठली के समान अथवा शहद के रंग सी।

भोज्य पदार्थ जिनके निरन्तर अत्यधिक प्रयोग से पथरी बनने की सम्भावना रहती है।

निम्नलिखित खनिज तत्वो की उनमे प्रचूरता रहती है –

फॉस्फेट- सम्पूर्ण अनाजो के आटे, दाल, मेवे, तेलयुक्त बीज, मांस, मछली, अण्डा व दूध।

कैल्शियम- हरी पत्तेदार सब्जियो, दूध, दूध से बने भोज्य पदार्थ, मछली, रागी ।

ऑक्जलेट- चाय, कॉफी, कोको, चोकलेट हरी पत्तेदार सब्जी पालक, टमाटर, बंदगोभी, सीसम के बीज, अंगूर।

प्यूरीन- मांस, मछली।

उपचार–

- उपचारात्मक आहार देने से अश्मरी को नष्ट नही किया जा सकता। लेकिन अश्मरी के प्रकार को जानकर अम्लीय या क्षारीय आहार देने से पथरी को आगे बढ़ने से रोका जा सकता है।
- तरल पदार्थो (पानी, नारियल एंव जौ का पानी, फलो का रस) का सेवन अधिक मात्रा मे करना चाहिए। क्योकि अधिक मात्रा मे सेवन ठोस पदार्थो को जमा नही होने देते तथा कैल्शियम फॉस्फेट की अश्मरियॉ घुलकर निकल जाती है। लगभग 2–$2^{1}/_{2}$ लीटर प्रति दिन तरल पदार्थ अवश्य लेने चाहिए।
- अश्मरी यदि कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फेट व कार्बोनेट की बनी हो, तब मूत्र की क्षारीयता को कम करने के लिए अम्लीय भोज्य पदार्थ लेने चाहिए। अम्लीय भोज्य पदार्थ– अधिक प्रोटीन तथा विटामिन सी युक्त आहार पनीर, दाल, मूँगफली, अखरोट, सम्पूर्ण अनाज, चावल, केले, नींबू, ऑवला, आदि।
- यदि अश्मरी ऑक्जलेट, सिस्टीन व यूरिक एसिड की बनी हो, तब मूत्र अम्लीय होता है अतः इसे क्षारीयता प्रदान करने के लिए भोजन मे दूध, फल, सब्जी, बादाम, सेम, की फली, अंजीर, खजूर, किशमिश, पालक, बेकिंग पाउडर तथा बेकिंग सोडा आदि पदार्थो को सम्मिलित किया जाना चाहिए।
- आहार मे कैल्शियम, फॉस्फेट, ऑक्जेलिक अम्ल व प्यूरीन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।
- कैल्शियम ऑक्जलेट की पथरी होने पर हरी पत्तेदार सब्जी, पालक, टमाटर, आलू, कोको, चाकलेट आदि का सेवन नही करना चाहिए।
- आयुर्वेद मे अश्मरीभेदन के हेतु कुछ भोज्य पदार्थ बताये गये है– कुलत्थ/कुलथी की दाल (horse gram), इक्षु/गन्ने का रस (sugar-cane), अनानास (pine-apple), त्रपुष/खीरा (cucumber), कंकोल/कबाबचीनी (cubeb), भूम्यालकी/भुई ऑवला।

- आयुर्वेदिक औषधियॉ– पाषाणभेद/पथरचूर, वरुण/बरुना (three leaved caper), वीरतरु/वुर्तुली, गोरक्षगज्जा/गोरखगॉजा, पुनर्नवा/गदहपुरना (spreading hogweed), गोक्षुर/गोखरु (land caltrops), काश/कास (thatch-grass), हपुषा/हाउबेरा (common juniper)

गुर्दे के रोग में प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग – डॉ0 प्रियात्मा त्रिपाठी बीएनवाईएस, डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद, एसोसिएट प्रोफेसर, कायचिकित्सा विभाग

आहार चिकित्सा–प्रारम्भ में रोगी को 3–4 दिन का उपवास करायें अथवा मूंग या जौ के पानी पर रखकर लघु आहार करायें। आहार में नमक बिल्कुल न दें या कम दें। नींबू के शर्बत में शहद या ग्लूकोज डालकर 15 दिन तक दिया जा सकता है। चावल की पतली घेंस या राब दी जा सकती है। मधुमेह की स्थिति में ग्लूकोज एवं चावल या राब नहीं दिया जाता। फिर जैसे–जैसे यूरिया की मात्रा क्रमशः घटती जाय वैसे–वैसे रोटी, सब्जी, दलिया आदि दिया जा सकता है। मरीज को मूंग का पानी, सहजन का सूप, गोक्षुर का पानी चाहे जितना दे सकते हैं।

किन्तु जब फेफड़ों में पानी का संचय होने लगे तो उसे ज्यादा पानी न दें, पानी की मात्रा घटा दें।

यदि पेशाब में शक्कर हो या पेशाब कम हो तो नींबू का रस दिया जा सकता है।

रोज 100 मि.लि से 200 मि.लि गोमूत्र भी दिया जा सकता है।

रोज 1 – 2 गिलास लौह चुंबकीय जल पीने से भी गुर्दे के रोग में लाभ होता है।

विहार – गुर्दे के मरीज को आराम जरूर करायें। सूजन ज्यादा हो अथवा यूरेमिया या मूत्र विष के लक्षण दिखें तो मरीज को शय्या पर पूर्ण आराम करायें।

मरीज को सूखें वातावरण में रखें, हो सके तो पंखे की हवा न लगने दें। तीव्र दर्द में गरम कपड़े पहनायें, गरम पानी से ही स्नान करायें। थोड़ा गुनगुना पानी पिलायें।

चिकित्सकीय परामर्श – गुर्दे के रोगी के लिए कफ एवं वायु का नाश करने वाली चिकित्सा लाभप्रद है जैसे कि स्वेदन वाष्पस्नान, गर्म पानी से कटिस्नान।

आसन – अर्धमत्स्येन्द्रासन, जानुशीर्षासन, भुजंगासन, धनुरासन, उष्ट्रासन, शशांकासन, सुप्तवज्रासन।

प्राणायाम – अनुलोम विलोम, उज्जायी, कपालभांति।

वृक्क प्रत्यारोपण – एक जानकारी
चन्दा श्रीवास्तव, मेडिसिनल केमेस्ट्री विभाग

प्रत्यारोपण या 'अंग बदलने' की आवश्यकता तभी होती है जब सामान्य चिकित्सा असफल या फेल हो जाती है तभी 'विकृत अंग' शरीर के लिए पूर्णतः अयोग्य या अनुपयोगी हो जाता है। प्रत्यारोपण कोई नयी विधि नहीं है वरन् भारतीय कथाओं में शिव शंकर द्वारा पुत्र गणेश के मस्तक का हाथी के मस्तक से प्रत्यारोपण करके एक पौराणिक सत्य सृर्जन किया था। जिस स्तर पर पहुँचने के लिए वर्तमान विज्ञान को सैकड़ो वर्ष लग सकते हैं।

मनुष्य में वर्तमान में वृक्क या वृक्क के अतिरिक्त नेत्र, जिगर, हृदय, चर्म, अस्थि आदि का भी प्रत्यारोपण चल रहा है। प्रत्यारोपण का अर्थ है, रोगी वृक्क या वृक्कों को निकाल कर उसके स्थान पर पूर्णतः स्वस्थ वृक्क को शल्य कर्म द्वारा रोगी में स्थापित करना। सामान्यतः जिन रोगियों का सम्पूर्ण वृक्क विफल या फेल हो जाता है उनके उपचार में शोधन या डायलिसिस के बाद यही सफल उपक्रम है। जिसे हम वृक्क प्रत्यारोपण कहते हैं।

सामान्यतः वृक्क प्रत्यारोपण दो प्रकार का होता है जो कि मुख्यतः वृक्क के प्राप्ति पर निर्भर करता है। यदि शव से प्राप्त वृक्क है तो उसे 'शव जनित' वृक्क प्रत्यारोपण कहते हैं तथा यदि वह जीवित व्यक्ति से लिया गया है तो उसे 'जीवित सम्बन्धी' वृक्क कहते हैं। जीवित वृक्क का श्रोत या तो रोगी के सम्बन्धी जैसे माता, पिता, भाई, बहन एवं पुत्र या पुत्री हो सकती है या गैर सम्बन्धी हो सकते हैं जिनका कि रोगी से कोई भी सम्बन्ध न हो। भारतवर्ष में सन् 1994 में लोकसभा ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसके अनुसार सामान्यतः खून के सम्बन्धी तथा पति या पत्नी, जिन्हें भावनात्मक सम्बन्धी माना गया, वृक्क के दाता वैध रूप से हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त सभी गैर सम्बन्धी द्वारा वृक्क दान अवैध है। विशेष परिस्थितियों में एक उच्चस्तरीय समिति को रोगी की समस्याओं के निदानार्थ कुछ अधिकार दिये गये हैं।

वृक्क प्रत्यारोपण में यदि दाता जीवित व्यक्ति है तो प्रथमतः उसका तथा रोगी का रक्त तथा शरीर, प्रतिरोधक क्षमता का विस्तृत परीक्षण किया जाता है तथा बाद में एचएलए प्रणाली द्वारा 'ऊतक' मिलान किया जाता है। जब सब कुछ मिल जाता है तो एक ही समय दो शल्य कक्षों में एक साथ शल्य कर्म करके दाता के एक वृक्क को निकाल कर रोगी में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है तथा रोगी को प्रतिरोधी क्षमता नाशक औषधियों का सेवन अनिवार्य हो जाता है। इसी प्रकार 'शवजनित' वृक्क प्रत्यारोपण में गम्भीर अवस्था

में 'मस्तिष्क मृत' रोगियों को चिन्हित कर लिया जाता है तथा विभिन्न परीक्षण कर उसके पुनर्जीवन के सम्बन्ध में जब पुनर्जीवन का अवसर नगण्य हो जाता है तो इस तरह के रोगियों के सम्बन्धियों से आज्ञा लेकर उस व्यक्ति के दोनों वृक्क निकाल लिया जाता है तथा उसको वृक्क बैंक में उचित सम्वर्धन किया जाता है। इसी बीच इसका मिलान प्रतीक्षा सूची के रोगियों से किया जाता है तथा संतोषजनक मिलान पर शीघ्रातिशीघ्र इस वृक्क को रोगी में प्रत्यारोपित कर दिया जाता है। इस विधि का प्रचलन विदेशों में जैसे अमेरिका, रूस, ब्रिटेन में काफी है।

मधुमेह जन्य वृक्क उपद्रव की चिकित्सा

प्रो0 एस0 के0 तिवारी भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, काय चिकित्सा विभाग

प्रमेह एक प्रकार की ऐसी व्याधि है जिसमें कई प्रकार के यूरिनरी डिसआर्डर आते हैं। प्रमेह मुख्य रूप से 3 प्रकार का होता है – 1. वातिक (वातज), 2. पैत्तिक (पित्तज) एवं 3. श्लैष्मिक (कफज) फिर इन तीनों के कुल भेद 20 होते हैं। कफज – 10, पित्तज–6 एवं वातज–4। वातज प्रमेह में मधुमेह एक भेद बताया गया है। यही Diabeties mellites है। इसके विषय में पाश्चात्य चिकित्सा में बताया गया है कि यदि चिकित्सक डायबटीज को ठीक से पढ़ लें तो समझ लीजिए की पूरी चिकित्सा पढ़ ली है। सुश्रुत में बताया गया है कि सभी प्रमेह समय के अनुसार मधुमेह में बदल जाते हैं। तब यह आयुर्वेद के अनुसार असाध्य हो जाता है। यही बात चरक चिकित्सा में बताया गया है।

या वातमेहान प्रतिपूर्वमुक्ता वतोल्वणानां विहिता क्रिया सा।
वायुर्हि मेहेष्वतिकर्शितानाम् कुप्यत्यसाध्यान्प्रति नास्ति चिन्ता।।

इस श्लोक से यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि हम वातोल्वण प्रमेह की चिकित्सा करते हैं न कि वातदोष के अत्यन्त कुपित हो जाने के बाद जब धातुओं का क्षय होने लगता है तब विभिन्न प्रकार के उपद्रव होने लगते हैं। जैसे Nephropathy, Retinopathi, Neuropathy etc. मधुमेह में करीब पूरे शरीर में या हर सिस्टम में उपद्रव दर्शनीय है।

वृक्क जन्य प्रारम्भिक उपद्रव की चिकित्सा आयुर्वेद द्वारा किया जा सकता है। इसमें कुछ सफलता भी दर्शनीय है। इसकी चिकित्सा में ज्वर चिकित्सा में जो पुनरावर्तक ज्वर की चिकित्सा बताई गयी है वह मधुमेह के लिये उपयोगी है।

किराततिक्तादिकषाय (चिरायता, कुटकी, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, गुडुची) का प्रयोग स्वयं अनुभूत है तथा मरीजों को दिया गया है एवं सफलता भी मिली है।

वृक्क जन्य उपद्रव में: बकायन (बड़ीनीम), भृंगराज, नागरमोथा एवं शिरीष की घनबटी बनाकर प्रयोग किया गया तो उसका प्रभाव रक्तगत यूरिया एवं क्रिटनीन पर अच्छा मिला।

इसके साथ ही तृणपंचमूल कषाय या इसका घनवटी बनाकर प्रयोग किया गया जिसका प्रभाव काफी सन्तोषजनक रहा।

इसके साथ ही अलसी एवं मेथी चूर्ण समभाग में दरदरा चूर्ण करके 1–1 चम्मच प्रातः एवं रात्रि सोने के समय गरम जल से दिया गया जिसका प्रभाव काफी संतोषजनक रहा।

उपरोक्त सभी चिकित्सा साथ–साथ दी गयी थी।

वृक्क रोगों में आयुर्वेद एवं पंचकर्म

डॉ0 अजय कुमार, प्रवक्ता, कायचिकित्सा एवं पंचकर्म विभाग, रा0आ0म0, वाराणसी

नेफ्रोपैथी का तात्पर्य है किडनी या वृक्क की संरचना और क्रिया में विकृति का होना। यदि यह विकृति मधुमेह के कारण होती है तो डायबेटिक नेफ्रोपैथी और यदि उच्च रक्तचाप के कारण होती है तो हाइपरटेंसिव नेफ्रोपैथी कहते हैं। किडनी के अन्दर बहुत छोटी–छोटी धमनियों एवं नेफ्रान्स का जाल होता है। अत्यधिक लम्बे समय तक मधुमेह में रक्त शर्करा का स्तर बढ़े रहने से या हाइपरटेंसन के कारण धीरे–धीरे धमनियों एवं नेफ्रान्स की संरचना में विकृति आने लगती है जिससे इनके प्राकृतिक कर्म प्रभावित होने लगते हैं और कुछ समय पश्चात् किडनी खराब होने लगती है।

नेफ्रोपैथी के निम्न लक्षण होते हैं –

1. ब्लड प्रेशर का अनियंत्रित होना।
2. पैरों में और अंगुलियो में सूजन का होना।
3. झागदार और बार–बार पेशाब होना।
4. हमेशा थकान लगना।
5. खून की कमी होना।
6. मानसिक रूप से अशान्त होना और अनिद्रा।

नेफ्रोपैथी से बचने के उपाय

1. नियमित रूप से रक्त शर्करा के स्तर की जांच कराकर एवं नियन्त्रित रखकर।

2. नियमित रूप से रक्तचाप के स्तर की जांच कराकर एवं नियन्त्रित रखकर। ब्लड प्रेशर का स्तर 140/90 से कम रखकर इससे बचा जा सकता है।
3. भोजन में प्रोटीन की मात्रा का सेवन कम करना चाहिए। कम प्रोटीन लेने से किडनी को कम कार्य करना पड़ता है।
4. नमक कम मात्रा में सेवन करना चाहिए।
5. पेशाब लगने पर रोकना नहीं चाहिए।
6. वजन पर हमेशा नियन्त्रण रखना चाहिए।
7. नियमित रूप से व्यायाम करना चाहिए।

आयुर्वेदिक औषधियां

1. पुनर्नवा, गोक्षरू, तृण पंचमूल, दूर्वा आदि औषधियों के प्रयोग से बहुत फायदा मिलता है।
2. रसौषधियों में पुनर्नवा मण्डूर, शिलाजत्वादि वटी, त्रिवंग भस्म, बसन्तकुसुमाकर रस, बहुमूत्रान्तक रस, श्वेत पर्पटी, यवक्षार आदि औषधियों का प्रयोग से इस रोग में लाभ मिलता है।
3. त्रिफला को सैन्धव के साथ मन्दोष्ण जल से लेने पर लाभ मिलता है।
4. द्राक्षा कल्क के सेवन से लाभ मिलता है।
5. छोटी कटेरी का स्वरस सेवन से इस रोग में लाभ मिलता है।

पंचकर्म चिकित्सा–वृक्क रोगों में आयुर्वेद एवं पंचकर्म का बहुत विस्तृत वर्णन मिलता है। इसमें मुख्य रूप से उत्तर बस्ति देते हैं। दोषानुसार त्रैवृत घृत, श्वदंष्ट्रा तैल आदि की उत्तर बस्ति देने से अत्यधिक लाभ मिलता है।

वृक्क रोगों में पंचकर्म चिकित्सा

डॉ0 सौरभ यादव, जे0 आर0 द्वितीय वर्ष, क्रिया शारीर विभाग

आधुनिक विज्ञान के अनुसार वृक्क में मूत्र निर्माण की प्रक्रिया सम्पन्न होती है। मूत्र निर्माण वृक्क में होने के पश्चात वस्ति में एकत्रित होता है। अतः वृक्क और बस्ति क्रियात्मक दृष्टि से संबंधित रहते हैं। वृक्क की व्याधियों से बस्ति व बस्ति की व्याधियों से वृक्क प्रभावित होता है। आयुर्वेद में मुख्यतः बस्ति में होने वाले रोगों का विधिवत वर्णन किया गया है। बस्ति मूत्रवह स्रोतस का मूल है।

मूत्रवह स्रोतस में होन वाली विभिन्न व्याधियां

मूत्रवह स्रोतस की दुष्टि होने पर विभिन्न रोगों की उत्पत्ति होती है जिनको मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया गया है।

1. मूत्राघात – ये 13 प्रकार के बताये गये है।
2. मूत्रकृच्छ – ये 8 प्रकार के बताये गये है।

मूत्रवह स्रोतों दुष्टि के लक्षण –

1. मूत्र का रूकना।
2. अत्यन्त कष्ट के साथ रूक–रूक कर या बार–बार मूत्र की प्रवृत्ति होना।
3. मूत्र त्याग के समय वेदना।

यही मूत्राघात एवं मूत्रकृच्छ के भी सामान्य लक्षण होते है

पंचकर्म चिकित्सा – इन रोगों में वर्णित पंचकर्म चिकित्सा इस प्रकार है।

1. वाताज मूत्रकृच्छ – अभ्यंग
   वातनाशक तैलों से – निरूह बस्ति, उपनाह, उत्तर बस्ति, परिषेक
2. पित्तज मूत्रकृच्छ – परिषेक, शीतल द्रव्यों से, अवगाहन, बस्ति, विरेचन
3. कफज मूत्रकृच्छ की चिकित्सा – स्वेदन, निरूह वस्ति, अभ्यंग
4. त्रिदोषज मूत्रकृच्छ – वाताधिक्य – बस्ति, कफाधिक्य – वमन, पिताधिक्य – विरेचन
5. मूत्राघात की चि0 –स्नेहन, स्नेह विरेचन, उत्तर वस्ति, आस्थापन वस्ति, अनुवासन

इन चिकित्सा विधियों को युक्तिपूर्वक व यथावश्यक रोगी तथा व्याधी के बलाबल का विचार कर प्रयोग करना चाहिए।

बस्ति चिकित्सा

उत्तर बस्ति – जिस किया में पुरूषो के मूत्रमार्ग में तथा स्त्रियों के मूत्रमार्ग/योनिमार्ग से दी जाती है उसे उत्तर बस्ति कहते है। इसमें दोषानुसार औषधियों से सिद्ध किये हुए स्नेहों को यथास्थान पहुंचाया जाता है। जिससे मूत्र विबंध योनीशूल एवं प्रदर आदि रोगों में लाभ मिलता है।

निरूह बस्ति– जिस किया में गुदमार्ग द्वारा शरीर में कषाय, क्षार व तैल प्रविष्ट कराया जाता है उसे निरूह बस्ति कहते है।

अनुवासन बस्ति– जिस किया में गुदमार्ग द्वारा शरीर में स्नेहन द्रव्यों का प्रवेश कराया जाता है। उसे अनुवासन बस्ति कहते हैं। यह क्रिया पंचकर्म का महत्वपूर्ण उपक्रम है। बस्ति चिकित्सा को अर्ध चिकित्सा भी कहते हैं।

मधुमेह जनित रेटिनोपैथी व उसका उपचार

प्रो0 बी0 मुखोपाध्याय शालाक्य विभाग

80 प्रतिशत से ज्यादा रोगी, जो कि 10 वर्ष या उससे ज्यादा समय से मधुमेह से पीड़ित हों, उनको रेटिनोपैथी जैसी समस्या के होने की अत्यधिक सम्भावना होती है। रक्त में शर्करा की बढ़ी हुई मात्रा, रेटिना की नलिकाओं को क्षतिग्रस्त करती है, जिसके कारण नलिकाओं से रक्तस्राव हो सकता है और रेटिना में सूजन हो सकती है। इन नलिकाओं की खराबी के ही कारण रेटिना की पोषक तत्वों व आक्सीजन की पूर्ति भी बाधित हो जाती है। इस अवस्था को नान प्रालिफरेटिव डायबिटीक रेटिनोपैथी कहते है। इस अवस्था में उपर्युक्त कारणों से दृष्टि में धुंधलापन के लक्षण आते हैं परन्तु सही समय पर सही उपचार न करने पर रेटिना ने निओवस्कुलराइजेशन होने लगता है जिससे प्रालिफरेटिव रेटिनोपैथी हो जाती है। इन असामान्य रक्त वाहिनियों के फटने से अंध बिन्दु का निर्माण भी हो जाता है।

लक्षण – प्रायः मधुमेह जनित रेटिनोपैथी का प्रारम्भ में कोई लक्षण नहीं दिखता है, परन्तु धीरे–धीरे रोगी को अवस्थानुरूप अनेक लक्षण मिल सकते हैं। जैसे –

- आंखों की रोशनी का एकाएक तेजी से कम होना।
- धुंधलापन सा दिखना।
- सिरदर्द का बना रहना।
- आंखों के सामने काले धब्बे दिखना।

रोगी की परीक्षा करने पर रोग की अवस्थानुरूप विविध लक्षण जैसे माइक्रोएल्यूरिज्म, रेटिनल हेमरेज, काटन वुल स्पाट, मैकुलर इडिमा आदि मिलते हैं। रोग के अत्यधिक बढ़ जाने पर निओवस्कुलराइजेशन व फ्राइब्रोवैस्कुलर रेटिनल डिटैचमेन्ट भी पाया जाता है।

रोग निदान –

आथ्रॉल्मोस्कोपी द्वारा परदे की जांच, स्लिटलैम्प बायोनाइक्रोस्कोपी द्वारा जांच। ओसीटी व एफएफए जांच द्वारा परदे का परीक्षण

उपचार – आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के अनुसार डायबिटिक रेटिनोपैथी का कोई बहुत कारगर उपचार उपलब्ध नहीं है, परन्तु निम्नांकित उपायों द्वारा दृष्टिहानि के जोखिम को कम किया जा सकता है।

- रक्त शर्करा की मात्रा नियन्त्रित करके।
- रक्तचाप व रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा नियन्त्रित करके।
- आंखों का प्रतिवर्ष परीक्षण करवाकर।
- दृष्टि में किसी भी प्रकार की हानि होने पर तुरन्त डाक्टर से सम्पर्क करके।

इसके अतिरिक्त रोग प्रक्रिया को धीमा करने हेतु लेजर फोटोकांगुलेशन का प्रयोग भी किया जा सकता है, जो कि अवस्थानुरूप फोकल, ग्रिड या पैन फोटोकांगुलेशन हो सकता है।

आयुर्वेद की उपादेयता – आयुर्वेदानुसार, प्रमेह जन्य नेत्र में उत्पन्न विकार में सम्प्राप्ति में त्रिदोष व क्लेद का योगदान होता है, जिनके कारण रक्तवाही स्रोतों में संग, ग्रन्थि, निर्माण गमन व अतिप्रवृत्ति आदि स्रोतोदुष्टि के लक्षण उत्पन्न होते हैं। अतः उपस्थित सम्प्राप्ति के अनुरूप, निम्नांकित चिकित्सा की जा सकती है –

- ➢ प्रमेहहर चिकित्सा
- ➢ क्लेदहर चिकित्सा
- ➢ रक्तवह स्रोतोदुष्टिहरण चिकित्सा
- ➢ शोफहर चिकित्सा
- ✓ इनके अतिरिक्त दोषाधिक्य के अनुसार दोषनाशक चिकित्सा भी की जाती है।
- ✓ विविध योगों का भी यत्र–तत्र वर्णन मिलता है यथा – वासकादि क्वाथ, फलत्रिकादि क्वाथ नेत्राशनिरस।
- ✓ इनके अतिरिक्त आहार में हरीतकी, आमलकी, शुण्ठी, शिलाजतु आदि द्रव्यों का समावेश भी उपयोगी सिद्ध हो सकता है।
- ✓ उचित दिनचर्या व रात्रिचर्या से तथा व्यायाम आदि का दैनिक जीवन में समावेश भी लाभकारी हो सकता है।

विविध अनुभूत योग जैसे मधुयष्टि गुग्गुलु, दृष्टिप्रभावती, वासकादि क्वाथ, आदि भी अनेक रोगियों में लाभकारी सिद्ध हुए हैं।

गुर्दा रोग से सम्बन्धित आहार – आहार विशेषज्ञ, नविता चन्द्रा

न खाये जाने वाले खाद्य पदार्थ

- केक, पेस्ट्री, ब्रेड, मछली। डिब्बा बंद खाद्य पदार्थ, सॉस, स्कॉश।
- पापड़, चीज, मेवा, नमक वाले चिप्स, पॉपकार्न, आचार, नमक वाले बिस्कुट।
- सॉफ्ट ड्रिंक, सॉस, कैचप, अजीनोमोटो युक्तखाद्य पदार्थ, मसाला।
- प्रेजरवेटिव – सोडियम बाइकार्बोनेट (खाने वाला सोडा), सोडियम बेन्जोएट, पोटैशियम मेटा बाइसल्फाइट
- शराब, तंबाकू नशे वाली चीजों से परहेज करें। बाजार का पाउडर सूप, जैसे मैगी सूप, नॉर सूप।
- वे खाद्य पदार्थ जो पोटैशियम में ज्यादा है, जैसे– आम, आंवला, तथा सभी खट्टे फल, साग वाली सब्जियां। मेवा, गुड़, चॉकलेट, कोको पाउडर। (इनका सेवन बहुत ही कम मात्रा में करें)। नोट – व्रत में खाये जाने वाले सेंधा नमक में भी पोटैशियम की अच्छी मात्रा रहती है।
- वे खाद्य पदार्थ जो अच्छी मात्रा में खाये जा सकते हैं – चीनी, शहद, आरारोट, साबुदाना, घी, तेल। (नोट– घी, तेल तथा चीनी का सेवन उचित मात्रा में तथा आहार विशेषज्ञ के परामर्श से ही करना है)।
- वे खाद्य पदार्थ जो पोटैशियम में कम हैं, पपीता, अनानास, सेब, अमरूद, तरबूज। (इन फलों की मात्रा 100 ग्राम तक ही खायें)।
- वे खाद्य पदार्थ जो फॉस्फोरस में अधिक हैं जैसे – दूध, चीज, मेवा, मटर इनकी मात्रा कम लें।

वृक्क (किडनी) रोग में लाभप्रद योगाभ्यास

अभिषेक कुमार, शोध छात्र, प्रो0 अनिल कुमार सिंह, द्रव्यगुण विभाग

कपालभाति– सुखासन में बैठ कर कमर, गर्दन सीधा रखते हुए हथेलियों को उपर रखते हुये घुटनों पर रखें। श्वास को झटके से बाहर निकालने का क्रम अपनायें। फिर श्वांस को भीतर लेने की आवश्यकता नहीं है। श्वांस को बाहर झटके से छोड़ते हैं तो पेट का निचला भाग भीतर जाता है और लगभग 1 सेकेण्ड में 1 बार झटके से श्वांस बाहर फेंकना चाहिए। 1 से 5 मिनट तक इस क्रिया को धीरे–धीरे बढ़ाते हुए करना चाहिये। **लाभ** – उदर की पेशियां मजबूत होती है । मधुमेह एवं वृक्क रोगों में विशेष लाभदायी है। **सावधानी** – उच्च रक्तचाप में बहुत धीरे–धीरे करें।

खड़े होकर किये जाने वाले आसन–

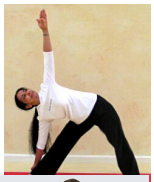

त्रिकोणासन – सीधे खड़े होकर दोनों पैरों को लगभग 2 फुट की दूरी बनाकर फैलायें। श्वांस भरते हुए हाथों को दोनों तरफ बगल में फैलायें। श्वांस छोड़ते हुए बांयी हथेली को दाहिने पैर के पास रखें। दाहिना हाथ सीधा आकाश की ओर एवं दृष्टि को उपर अंगूठे की ओर रखें। अब श्वांस भरते हुये दोनों हाथों को बगल से फैलायें तथा श्वांस छोड़ते हुए दांयी हथेली को बांये पैर के पास रखें बायां हाथ आकाश की ओर सीधा रहेगा। इसी प्रकार की आवृत्तियां 15 से 20 बार करें।

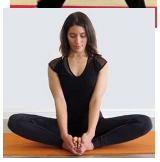

लाभ – निष्क्रिय गुर्दे सक्रिय होते हैं। **सावधानी** – कमर दर्द, सर्वाइकल वाले न करें।

बैठ कर करने वाले आसन

बद्धकोणासन– सीधे बैठें व पैर आगे फैला लें। अब घुटने मोड़ कर पैरों के तलुए एक साथ शरीर के नजदीक लाएं और इन्हें अपने हाथों से नीचे की ओर से पकड़ लें। अपनी एड़ियां अपनी जननेन्द्रियों के जितने समीप हो सके लें आएं। एक गहरी सांस अन्दर लें। श्वांस छोड़ते हुए अपनी जंघाओं और घुटनों को नीचे दबाएं और इस स्थिति में गहरी सांस लें। इस स्थिति में सीधे बैठें और सांस अन्दर भरें। धीरे–धीरे सांस छोड़ते हुए आगे झूकें।

लाभ – सुस्त पड़े पेट के अंगों को, अंडाशय, प्रोस्टेट ग्रंथि, मूत्राशय व गुर्दो को यह आसन उद्दीप्त करता है। **सावधानी** – घुटनों के दर्द वाले न करें।

अर्धमत्स्येन्द्रासन– दोनों पैरों को सीधा फैला कर बैठ जाऐ। बाएं पैर को मोड़कर एड़ी

को नितम्ब के पास लगाए। दायें पैर को बाएं के घुटने के पास बाहर की ओर भूमि पर रखें। बाएं हाथ को दायें घुटने के समीप बाहर की ओर सीधा रखते हुए दाएं पैर के पंजे को पकड़े। दायें हाथ को पीठ के पीछे से घुमाकर पीछे की ओर देखें। इस प्रकार से दूसरी ओर से भी आसन करें।

लाभ – पेट के विभिन्न अंगों के साथ–साथ निष्क्रिय वृक्क के लिये यह आसन लाभदायी है। **सावधानी** – हर्निया के मरीज न करें।

शशकासन– सबसे पहले वज्रासन में बैठ जाएं और फिर अपने दोनों हाथों को सांस भरते हुए उपर उठा लें। कंधों को कानों से सटा हुआ महसूस करें। फिर सामने की ओर झुकते हुए दोनों हाथों को आगे समानांतर फैलाते हुए, सांस बाहर निकालते हुए हथेलियां को भूमि पर टिका दें। फिर माथा भी भूमि पर टिका दें। कुछ समय तक इसी स्थिति में रहकर पुनः वज्रासन की स्थिति में आ जाइए। **लाभ** – पेट के विभिन्न अंगों को उद्दीप्त करके वृक्क रोग में लाभ पहुंचाता है। **सावधानी** – सर्वाइकल स्पोन्डेलाइटिस में न करें।

सुप्त वज्रासन– सबसे पहले आप वज्रासन में बैठ जाएं। कोहनियों का सहारा लेते हुए धीरे–धीरे पीछे की ओर झुकें और कोहनियों को जमीन पर टिका दें। हाथों को धीरे–धीरे सीधे फैलाएं और सिर के पीछे की ओर ले जाएं। अब कंधों को जमीन पर टिकाते हुए एवं घुटनों को एक साथ रखते हुए पीठ के बल लेट जाएं। हाथों को कैंची की आकृति बनाते हुए कंधों के नीचे लेकर आएं। धीरे–धीरे सांस लें फिर धीरे–धीरे सांस छोड़े। अपने हिसाब से इस अवस्था को बनाएं रखें। फिर धीरे–धीरे अपने आरंभिक अवस्था में आ जाएं। यह एक चक्र हुआ। इस तरह से आप 3 से 5 बार चक्र कर सकते हैं। **लाभ** – अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के साथ–साथ मूत्र पिण्ड की ग्रन्थि, पौरूष ग्रन्थि को पुष्ट करता है। **सावधानी** – घुटनों के दर्द वाले न करें।

पेट के बल लेटकर किये जाने वाले आसन

भुजंगासन– पेट के बल सीधे लेट जाएं। दोनों पैरों की एड़ियों और पंजों को मिलाकर तान दें। दोनों हाथों को कोहनियों से मोड़ते हुये छाती के दोनों ओर सटाकर रखें। माथा जमीन पर सटाकर रखें अब श्वांस भरते हुए धीरे–धीरे सर्वप्रथम माथा उठाएं, कुहनियों को सीधा रखते हुए मेरूदण्ड के मध्य भाग को तानें, पैर मिलाकर ही रखें श्वांस रोक कर 5–20 सेकेण्ड तक रूकें एवं धीरे से श्वास छोड़ते हुये सामान्य स्थिति में आयें। इस आसन को 5 से 7 बार करें। **लाभ** – मधुमेह और उदर के रोगों से मुक्ति मिलती है। **सावधानी** – अल्सर, हर्नियां, उच्चरक्तचाप में न करें।

सीधे लेट कर करने वाले आसन (पीठ के बल)

कटिपिण्डमर्दनासन– पीठ के बल सीधे लेट जायें। दोनों हाथों को आमने–सामने फैला दें। मुट्ठियां बंद रखें। दोनों पैरों को घुटनों से मोड़कर खड़ा कर दें। पैर के तलुवे जमीन से लगे रहें। दोनों पैरों के बीच इतना अंतर रखें कि घुटनों को जमीन पर झुकाने से एक पैर का घुटना दूसरे पैर की एड़ी को लगे। अब सिर दाहिनी ओर मुड़े तो घुटने बायीं ओर जमीन को लगें, सिर बायीं ओर मुड़े तो दोनों घुटने दाहिनी ओर जमीन को लगें, इस प्रकार 15–20 बार करें। दोनों पैरों को एक साथ रखकर भी यह किया करें। **लाभ** – इससे पथरी के दर्द में लाभ होता है और मूत्र विकार दूर होते हैं। **सावधानी** – स्लिप डिस्क वाले रोगी न करें।

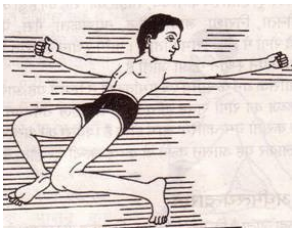

शवासन– सीधे लेट जायें। दोनों पैरों को खोलकर लगभग दो फुट की दूरी बना लें। दोनों हाथों को भी शरीर से अलग लगभग 1 फुट की दूरी पर रखें, हथेलियां आकाश की ओर रहेंगी। सम्पूर्ण शरीर को तनाव रहित, ढीला, शिथिल अवस्था में महसूस करें, श्वांस की प्रक्रिया धीरे–धीरे लम्बा और गहरा श्वांस लें एवं छोड़े। 2 से 5 मिनट इस अवस्था में रहकर बायीं करवट लेते हुए उठकर बैठ जायें। **लाभ** – शरीर में विश्रान्ति एवं मन में प्रसन्नता आती है। उच्च रक्तचाप, तनाव एवं विक्षेप में लाभप्रद है।